(१०)

आचार्य का दक्षिण भ्रमण

जब पद्मपाद तीर्थभ्रमण के लिए चले गये तो श्रृंगेरी के सभी लोगों को उससे बहुत कष्ट हुआ। वे आचार्य के प्रथम, प्रधान और प्रिय शिष्य तो थे ही, देहरक्षक के रूप में भी वे बराबर उनके साथ सभी अवस्थाओं में रहते थे। इसके अतिरिक्त वे जिस मर्मवेदना का भार वहन करते हुए गये थे, वह सभी के हृदय में शूल के समान चुभ रही थी।

परन्तु आचार्य निर्विकार चित्त से सभी के जीवन में पूर्णता-सम्पादन के लिए सदा ही तत्पर रहते थे। स्वाध्याय, शास्त्रविचार, साधनभजन आदि श्रृंगेरीनिवासियों की जीवनधारा में अविराम गति से चल रहा था। एक दिन प्रात:काल आचार्य शिष्यों के सामने शास्त्रव्याख्या कर रहे थे। उसी समय उनके मुख में माता के स्तनपान का-सा स्वाद अनुभूत हुआ। उन्हें ऐसा भास हुआ कि उनकी जननी अन्तिम शय्या में पड़ी पड़ी उन्हें स्मरण कर रही हैं। पाठ बन्द करके वे ध्यानस्थ हो गये। कुछ क्षणों के बाद शिष्यों से उन्होंने कहा - "माता अन्तिम क्षण में मुझे स्मरण कर रही हैं। मैं उनके सामने प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि अन्तिम समय में मैं उनके चरणकमलों में प्रस्तुत रहूँगा। मुझे अभी ही माता के पास चले जाना होगा।"

इतना कहकर आचार्य शंकर योगावलम्बनपूर्वक आकाशमार्ग से देवदूत के समान केरल देश में माता के पास पहुँच गये।*

* आचार्य के जीवन की अनेक घटनाओं के समान इस घटना के सम्बन्ध में भी मतभेद है। किसी किसी जीवनीग्रंथ में मिलता है कि आचार्य लोगों के मुख से माता की बीमारी का समाचार सुनकर तुरन्त शिष्यों के साथ केरल की ओर चल पड़े और यथासमय माता की

शंकर-जननी अन्तिम शय्या पर पड़ी हुई थीं। पास में एक वृद्धा सेविका बैठी थी। थोड़ी दूर पर एक गरीब सगोत्र व्यक्ति उदास बैठा था। ठीक इसी समय आचार्य शंकर ने सामने जाकर जननी को प्रणाम किया। दीर्घकाल के अनन्तर अप्रत्याशित भाव से अपने एकमात्र पुत्र को पाकर विशिष्टादेवी प्रबल हृदयावेग से अधीर हो उठीं। अनेक प्रकार से वे अपने पुत्र को स्नेह जताने लगीं। पुत्र भी माता के चरणों के पास बैठकर उन्हें विविध प्रकार से सान्त्वना देने लगा। अपने प्रिय पुत्र को पाकर माता अपनी रोगयन्त्रणा भूल गयीं। तरह तरह से प्यार करके भी माता को मानो तृप्ति नहीं हो रही थी।

माता को ज्वराक्रान्त और जराग्रस्त देखकर आचार्य ने कहा – "माँ! मैं आपकी सेवा के लिए आया हूँ। आप शोक का परित्याग कर स्वस्थ हो जायें। आपको क्या कष्ट हैं बताइये। औषधि, पथ्य और सेवा आदि के द्वारा मैं आपको स्वस्थ करूँगा।"

विशिष्टादेवी ने कहा – "बेटा, तुम्हें भला-चंगा देखकर मैं आनन्दित हुई हूँ। मेरे शरीर को जरा और रोग ने घेर लिया है। अब तुम्हारे सामने ही मर सकूँ तो शान्ति होगी। कुटुम्बियों ने मेरे ऊपर अनेक अत्याचार किये हैं। यह बुढ़िया सेविका और वह गरीब पड़ोसी न होता तो बहुत पहले ही मेरी मृत्यु हो गयी होती। मेरे मरने के बाद तुम इनका दुःख दूर करना। उससे मुझे सुख ही मिलेगा। अब तुम जाकर स्नान-भोजनादि करो।"

माता के आदेशानुसार आचार्य स्नान-भोजन आदि से निवृत्त होकर जब लौट आये तब विशिष्टादेवी ने उनसे कहा – "बेटा! तुम मेरे महाप्रयाण का आयोजन करो। तुम्हें देखूँगी यही इच्छा लेकर अब तक मैं जी रही थी। तुम मेरे पास आ गये हो, मुझे अब कोई कामना नहीं है। केवल यही करो जिससे मैं सद्गति पा सकूँ और अपने इष्टलोक में पहुँच जाऊँ।"

शंकराचार्य को प्रतीत हुआ कि माँ की मृत्यु आसन्न है। उन्होंने माता

मृत्युशय्या के पास पहुँच गये। आकाशपथ से गमनरूप अलौकिक कार्य आजकल अनेक व्यक्ति सत्यरूप नहीं मानेंगे। इसके अतिरिक्त उससे आचार्य-जीवन का महत्त्व बढ़ता भी नहीं है। उनकी श्रेष्ठता दूसरे विषयों में है।

को परब्रह्मतत्त्व सुनाते हुए कहा – "माँ, आप परब्रह्म का स्वरूप ज्ञात होने पर मोक्षलाभ कर सकेंगी।"

आचार्य के तत्त्वोपदेश का कुछ अंश सुनकर विशिष्टादेवी बोलीं – "बेटा, मैं अशिक्षित स्त्री हूँ। मन-वाणी के परे उस निर्गुण ब्रह्म को मैं कैसे जान सकूँगी? बेटा, तुम कमनीयकान्ति हृदय-रंजन किसी देवविग्रह का मुझे दर्शन कराओ जिससे मेरे नेत्र सफल हों, मेरा जीवन सार्थक हो।"

माता की इच्छा जानकर आचार्य कुछ काल तक मौन रहे, फिर बोले – "माँ, आप आँख मूँदकर मन को भगवान् में समाहित कीजिये। उसी से आप भुवनरंजन देवाधिदेव का दर्शन कर सकेंगी।"

माता की प्रीति के लिए उन्होंने भुजंगप्रयात छन्द में अष्टमूर्ति महादेव का स्तोत्र रचकर उसका पाठ किया। महादेव ने शंकराचार्य की स्तुति से प्रसन्न होकर विशिष्टादेवी को शिवलोक में लाने के लिए अनुचरों को भेज दिया। किन्तु शंकर-जननी त्रिशूल-पिनाकधारी भीषणमूर्ति शिवदूतों को देखकर भयभीत हो गयीं और पुत्र से कहने लगीं – "बेटा, ये आदमी बहुत ही भयंकर हैं। इनके साथ मैं नहीं जाऊँगी।"

आचार्य ने बहुत विनय के साथ शिवदूतों को विदा कर दिया। उसके अनन्तर माता के इष्टदेव केशव को स्मरण कर उन्होंने पुनः लक्ष्मीपति विष्णु का स्तवन किया। इधर अनेक ग्रामवासी उस अलौकिक कार्य को देखने के लिए वहाँ उपस्थित हो गये।

यतिश्रेष्ठ शंकर अपनी माता की अन्तिम इच्छा पूर्ण करने के लिए अत्यंत कातर होकर श्रीविष्णु के चरणों में प्रार्थना करने लगे। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी श्रीभगवान् विष्णु ने दिव्य ज्योति से दशों दिशाओं को आलोकित करते हुए आचार्य के समक्ष आकर उनकी प्रार्थना के अनुसार विशिष्टादेवी को भी दर्शन दिये। इष्टदर्शन से पुलकित होकर विशिष्टादेवी पुत्र को अनेक आशीर्वाद देने लगीं। इतने में ही विष्णुदूत सुन्दर विमान लेकर वहाँ उपस्थित हुए। विष्णु तथा उनके पार्श्वचरों के आगमन से विशिष्टादेवी का घर वैकुण्ठ में परिणत हो गया। शंकर-जननी

ने आनन्दविह्वल होकर श्रीविष्णु भगवान् के चरणों में प्रणाम किया। तदनन्तर विष्णुदूतों ने विशिष्टादेवी को आदर के साथ विमान में उठा लिया। क्रमश: विमान वायु, विद्युत्, वरुण, चन्द्रलोक, सूर्यलोक, इन्द्रलोक तथा ब्रह्मादि देवताओं के निवास अर्चि:, अह: आदि ज्योतिर्मय लोकों का अतिक्रमण करते हुए विष्णु-लोक पहुव गया। पुत्र के तप:प्रभाव से विशिष्टादेवी भी परम-पद को प्राप्त हुईं।

माता के अन्तिम समय उपस्थित होकर उन्हें इष्टदेव-दर्शन तथा परमगति-प्राप्ति की व्यवस्था करा सकने से आचार्य ने अपने को कृतकृत्य माना। शंकराचार्य बचपन से ही विशेष मातृभक्त थे। वे जानते थे कि गर्भधारिणी जननी आद्याशक्ति जगज्जननी का ही अंशरूप हैं। उनकी मातृभक्ति ब्रह्मज्ञान के उच्च शिखर से उतरकर भक्तिगंगा में मिल गयी थी। प्रसन्न चित्त से वे माता के अन्तिम आदेश को स्मरण कर उनकी दाहक्रिया करने के लिए तैयार हुए। इतने में कुटुम्बी लोग भी वहाँ आ पहुँचे। उन्हें देखकर आचार्य बोले – ''माता की इच्छा थी कि मैं ही उनकी अन्तिम क्रिया करूँ। यद्यपि संन्यासी के लिए वैसा कार्य शास्त्र-विहित नहीं है तथापि मातृआज्ञा-पालन ही मेरा परम धर्म है। इसलिए आप लोग इसका आयोजन कीजिये।''

शंकराचार्य की बात सुनकर कुटुम्बियों ने अत्यन्त उत्तेजित होकर उन्हें शठ, लोभी, पाखण्डी आदि दुर्वचन सुनाकर कहा – ''माता का क्रियाकर्म करने का तुम्हें कोई अधिकार नहीं है। इस प्रकार अशास्त्रीय कार्य करने से तुम्हें हम लोग सम्पत्ति का अधिकारी होने नहीं देंगे।''

आचार्य जितने ही विनय से कहने लगे कुटुम्बी लोग उतने ही अशान्त और दुर्विनीत होकर कटु भाषा में उन्हें खरीखोटी और दुर्वचन सुनाने लगे। आचार्य अपनी माँ के अन्तिम शब्द को स्मरण कर सब पी गये और विनीत स्वर में कहने लगे – ''माता की इच्छानुसार मैं इस वृद्धा सेविका तथा निर्धन बन्धु को ही अपनी सारी सम्पत्ति दूँगा। यही मेरा संकल्प है।''

उनकी बात सुनकर सब बन्धु-बान्धव आगबबूला हो उठे और उस